शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 03 अंक– 12 अक्टूबर - दिसंबर - 2025 Impact factor– 03

'मृत्यु और हंसी' : स्त्री स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष

डॉ. विनोद कुमार विश्वकर्मा
कवि एवं उपन्यासकार, सहायक प्राध्यापक, हिन्दी,
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा - (मध्य प्रदेश) 486001
ईमेल - dr.vinod.vishwakarma@gmail.com, मो. - 09424733246

मानवीय समाज के सामानतावादी विकास और स्त्री के जीवन स्वरूप को बदलने के लिए निरंतर ही भारतीय एवं विश्व समाज में संघर्ष जारी रहे हैं। इसका कारण यह रहा है कि इतिहास के एक दौर ने स्त्री को अनेक जंजीरों में जकड़ कर रख दिया है। दिन में नैतिकतावादी जंजीरें हैं और आर्थिक रूप से कमजोर होने की एक मोटी जंजीर है। वह दौर मध्यकाल का हो सकता है, या यह पूरी तरह से नहीं कहा जा सकता कि किस दौर ने स्त्री को परतंत्रता प्रदान की लेकिन यह कहा जा सकता है कि स्त्री को लेकर के मनुष्य के हृदय में मध्यकाल की बर्बरता का दौरा आज भी जारी है। स्त्री को अभी भी वस्तु के रूप में ही स्वीकार किया जाता है। ऐसा क्यों है ? इसके लिए नए तरह के संघर्ष की जरूरत है।

प्राकृतिक रूप से देखा जाए तो मानवीय समाज का निर्माण कुछ इस तरह से हुआ है कि इस समाज में सभी स्वतंत्र और सम्मान हैं। लेकिन भारतीय और वैश्विक सामाजिक ढांचे को देखा जाए तो पता चलता है कि समानता का जो प्राकृतिक स्वरूप है, वह कई स्तरों पर टूटा हुआ है। यह एक ऐसा असमान स्वरूप है, जो समानता के अंदर ही छुपा हुआ है। इसी दृष्टि से भारतीय और वैश्विक समाज में स्त्री के जीवन को देखा जा सकता है। समय के 21वीं शताब्दी तक पहुंच जाने के बाद भी आज जबकि स्त्री स्वतंत्रता और स्त्री न्याय के बहुत बड़े दावे किए जाते हैं। आज भी स्त्रियां कितनी स्वतंत्र हैं और वह अपनी स्वतंत्रता के लिए कितनी जद्दोजहद कर रही हैं, हमसे और आप से यह छुपा नहीं हैं। प्रदीप अवस्थी का पहला उपन्यास – 'मृत्यु और हंसी' इसी की कहानी को कहता है।

यह एक स्त्री वृंदा की स्वतंत्रता की आकांक्षा का उपन्यास है। वह स्त्री एक ऐसी स्त्री है जो हमें हमारे आसपास मिल जाएगी। वह समाज में पीड़ित वर्ग की प्रतिनिधि पात्र है। वृंदा जिस तरह से घुटन भरे माहौल में अपना जीवन जी रही है, ऐसा अनेक स्त्रियां भारतीय और विश्व समाज में जी रही हैं। इस लिहाज से देखा जाए तो यह उपन्यास व्यापक मुद्दों की बात करता है। उत्कृष्ट और उदात्त जीवन मूल्यों की तलाश करते हुए, पितृसत्ता पर कई सवाल खड़े करता है। मसलन यह पितृसत्ता में पुरुषों के लिए स्वतंत्रता है, स्त्रियों के लिए स्वतंत्रता क्यों नहीं है ?

कहा जाता है कि जो संविधान बनाता है, वह अपने लिए सारी सहूलियत रख लेता है। इसी तरह से जब समाज की संरचना हुई तो पुरुष ने नियम बनाए और सारी सुख–सुविधाएं अपने लिए रख ली। इसी तरह से जब कोई पुरुष विवाहित होते हुए भी किसी दूसरी स्त्री से प्रेम करता है, तो उसके प्रेम पर, उस पर कोई लांछन नहीं लगता। कोई कुछ भी सवाल नहीं उठाता। वह इसे अपना हक समझता है। लेकिन यही काम जब कोई स्त्री करने लगती है और वह भी तब करती है जब उसे अपने परिवार में प्रेम नहीं मिलता। तब क्या होता है ? प्रदीप अवस्थी का यह उपन्यास 'मृत्यु और हंसी' इस सामाजिक स्वरूप को हमारे सामने मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रकट करता है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो यह कहा जा सकता है कि यह एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है।

उपन्यासकार आज 21 वी शताब्दी के उत्तर आधुनिक युग में हमें यह दिखाता है कि वास्तव में हम चाहे कितने भी बदल गए हों, हमारी सामाजिक परिस्थितियां, आर्थिक परिस्थितियां, यंत्रवाद, तकनीकी, मोबाइल, टीवी कुछ भी आ गया हो। लेकिन जो हमारा दिमाग है, स्त्री को लेकर के उतना ही संकुचित है, जितना सातवीं – आठवीं शताब्दी में रहा होगा या मध्यकालीन भारतीय समाज में और वैश्विक समाज में रहा होगा।विवाह एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसमें स्त्री और पुरुष दोनों के लिए समानता की अवधारणा को विकसित करने की कोशिश की गई है। लेकिन आंतरिक रूप से देखा जाए तो विवाहित जोड़े कुछ ही प्रतिशत सुखी होते हैं नहीं तो 70% स्त्रियां विवाह के बाद अपने ही पुरुष से पहली रात को बलत्कृत होने के लिए विवश होती हैं। और अनचाहे बच्चों को जन्म देती हैं। वृंदा ऐसी ही एक स्त्री है, जिसका न चाहते हुए भी विवाह हो गया है, राघव से। और उसके दो बच्चे हैं। उसका पति एक दूसरी लड़की मोहिनी से प्यार करता है। वह उसे रोकना चाहती है लेकिन रोक नहीं पाती है। ऐसे में वह युवक कुणाल से प्रेम कर बैठती है। और पितृसत्ता के लिए यह सबसे बड़ी चुनौती है कि कोई स्त्री किसी दूसरे पुरुष से प्रेम करने लगे। अपने पति के होते हुए भी। इस समस्या के समय हमारे समाज का मनोविज्ञान कैसा है ? इसका विवरण प्रदीप अवस्थी ने व्यापकता और गहराई से 'मृत्यु और हंसी' उपन्यास में किया है।

उपन्यास का अंकन इतना सजीव है कि ऐसा लग रहा है कि कोई चलचित्र हमारे सामने चल रहा है। दिल दहला देने वाली स्थितियां पैदा हो जाती हैं। जब वृंदा अपने प्रेमी के साथ स्वतंत्र रूप से रास्तों पर विचरण करने लगती है। और वह चाहती है कि उसका पति खुलेआम प्रेम करता है, तो वह भी क्यों न खुलेआम प्रेम करे ? तो उसे मृत्यु का बोध होता है। नैतिकता सामाजिक मानदंड बच्चे और इज्जत का ख्याल आता है। यह सब स्त्री को ही क्यों होता है ? पुरुषों को क्यों नहीं होता ? पुरुष को क्यों नहीं लगता कि वह कुछ गलत कर रहा है ? स्त्री को ही क्यों लगता है कि वह कुछ गलत कर रही है ? इसी पशोपेश में ,गलत और सही की स्थिति को जीते हुए, एक समय ऐसा आता है कि वृंदा आत्महत्या करने के लिए विवश हो जाती है।

'मृत्यु और हंसी' में उपन्यासकार लिखता है ,यथा " – यह एक अजीब विडंबना थी कि एक तरफ राघव मोहिनी के साथ दिन-रात समय बिताता था लेकिन कोई अफवाह नहीं होती थी। किसी की नजर भी नहीं पड़ती थी। या तो उस तरफ से पड़ती हो जिस तरफ मोहिनी थी। जैसे इस तरह पढ़ती थी जिस तरफ वृंदा थी। कुछ अस्वाभाविक वही क्यों नजर आता है जहां किसी औरत की बात हो।[1]"

स्त्री और पुरुष पारिवारिक ढांचे को छोड़कर के जब अलग-अलग व्यक्तियों से प्रेम करने लगते हैं। तब पारिवारिक ढांचा किस तरह से टूटकर बिखर जाता है। बच्चे अपने आप में क्या महसूस करने लगते हैं ? 'मृत्यु और हंसी' उपन्यास इस विषय पर भी प्रगाढ़ता से विचार विमर्श करता है। और पाता है कि जब ऐसी स्थितियां पैदा होती हैं तो कम उम्र में ही बच्चे अपनी जिम्मेदारियों को समझने लगते हैं या समझ ले तो अच्छा हो जाता है।

अंश और नैना नामक पात्र इस बाल मनोविज्ञान को प्रकट करने में व्यापक रूप से अपनी भूमिका निभाते हैं। इस उपन्यास में बाल मनोविज्ञान और सामाजिक मनोविज्ञान को इस तरह से पकड़ने की कोशिश की गई है कि कैसे स्त्री के पक्ष में खड़ा हुआ जा सके ? कैसे स्त्री की स्वतंत्रता की बात की जा सके ? कैसे पितृसत्ता की जंजीर को

खोला जा सके ? ऐसे में अंश जो वृंदा का बड़ा बेटा है, और 14 वर्ष के आसपास है, और उसकी दोस्त नैना । यह दोनों मिलकर के वृंदा को बचाते हैं । अंश को उसके स्कूल में दोस्तों से सिर्फ इसलिए प्रताड़ित किया जाता है कि उसकी मां अपने दोस्त के साथ क्रिकेट देखने आई थी ।उसका पापा क्यों नहीं आया था ? और एक रात जब वह देखता है तो उसकी मां नींद की गोलियां खाकर आत्महत्या करने वाली है, वह अपनी मां को बचा लेता है । यहां मृत्यु बोध और ज्ञानात्मक संवेदना का उदय होता है । यहां सत–चित–वेदना के उदय को हम प्रभावी रूप से देखते हैं ।' मृत्यु और हंसी' वास्तव में मृत्यु और जीवन के बीच के संघर्ष को किस तरह से एक स्त्री जीती है ? उसको प्रकट करने में एक सफल उपन्यास है ।

टॉलस्टॉय के उपन्यास 'अन्ना कारेनिना' में अन्ना आत्महत्या कर लेती है । वह आत्महत्या इसलिए करती है कि वह जख्म भरे समाज में पितृसत्ता के दंश को झेलते हुए कड़वाहट पूर्ण समाज में अपने बीस साल बड़े पति के साथ अपना जीवन जी रही थी । जिससे वह प्रेम करती थी, उसके साथ जीना चाहती थी । लेकिन स्त्री को प्रेम करने और स्वतंत्र जीवन जीने की पितृसत्ता में स्वतंत्रता नहीं है, अन्ना सामाजिक माहौल और तानो को न सह पाने के कारण आत्महत्या कर लेती है । इस दृष्टि से देखा जाए तो 'मृत्यु और हंसी' एक बड़ा उपन्यास है । जिसमें वृंदा को लेखक बचाने में कामयाब हो जाता है । यह वृंदा को बचा लेना उपन्यास की बहुत बड़ी उपलब्धि है । पितृसत्ता में सेंध लगा देना है । मानवता के पक्ष में खड़े हो जाना है । स्त्री के पक्ष में प्रेम, स्वतंत्रता और न्याय की स्थापना का शंखनाद कर देना है । यह प्रकट कर देना है कि 'स्त्री और पुरुष' के लिए समाज में समान रूप से व्यवस्था होनी चाहिए । आर्थिक और सामाजिक स्तर पर दोनों को समानता का अधिकार है । और इस अधिकार पर स्त्री का भी पूरा हक है, उतना ही जितना पुरुष का ।

वृंदा की कार दुर्घटना हो गई है और उसका इलाज चल रहा है । ऐसे में उसके पति राघव का पिता कहता है – "राघव तुम दुखी मत हो, तुम्हारी दूसरी शादी हो जाएगी और फिर जो वृंदा की संपत्ति है, जो वृंदा का व्यवसाय तुम कर रहे हो, वह तो तुम्हें ही मिलना है ।"[2] यह कथन स्पष्ट रूप से यह प्रकट करता है कि न केवल भारतीय समाज एवं वैश्विक समाज में भी स्त्री केवल वस्तु है । और वस्तु को भोगा जाता है । उसे गुलाम रखा जाता है। उसे स्वतंत्रता नहीं दी जाती है । उसे जब चाहे तब छोड़ दिया जाता है। और उसके स्थान पर नई वस्तु उपभोग के लिए लाई जाती है । यह सत्ता का बहुत बड़ा वाक्य है । बहुत बड़ा खेल है । बहुत बड़ा तिलिस्म है। जिसे' मृत्यु और हंसी' उपन्यास व्यापक संघर्ष और मनोवैज्ञानिक ढंग से तोड़ने का प्रयास करता है ।

वृंदा कुणाल से प्यार करती थी । कुणाल वृंदा से प्यार नहीं करता था । वह वह मुंबई में रहता था और अभिनय के क्षेत्र में करियर बनाने के लिए संघर्ष कर रहा था । वृंदा ने कुणाल से टूट कर प्यार किया । अपना सब कुछ उसे दे दिया लेकिन कुणाल ने चतुराई से प्यार किया और उसने वृंदा छोड़ दिया । वृंदा के " मन में यह बात बैठ रही थी कि उसे दुत्कारा जा रहा है । अपमानित होकर भी वह सब कुछ बचा लेना चाहती थी । यह पितृ सत्ता से ग्रसित पिताओं का समाज था । बलत्कृत होती औरतों का समाज था । सब कुछ ढक कर रखने वालों का समाज था । चुप रहना था, सहना था और छद्म नैतिकताओं के बोझ को ढोना था। [3]

वास्तव में यह उपन्यास इसलिए व्यापक और काबिले गौर है की यह उस धारा में चिंतन करता है, उस चुप्पी के खिलाफ है, जिसमें स्त्री को बार-बार रौंदा जाता है । और अपने रौंदे जाने के बावजूद भी वह सब कुछ बचा लेना चाहती है । पुरुष को हो रहे पारिवारिक विखंडनकी उतनी चिंता नहीं होती है, जितना स्त्री को होती है ।

यह प्रश्न इस उपन्यास में बार-बार आया है, और यह इस उपन्यास का उजला हो पक्ष है, जो हमारे अंतर्मन को प्रकाशित कर देता है ।वास्तव में यह उपन्यास एक कदम आगे जाकर यह प्रस्तुत करता है कि इस पारिवारिक विखंडन की चिंता बार-बार स्त्री ही क्यों करती रहे ? और इसी चिंता में अपने आप को जलाती रहे ? अपने आप को मारती रहे ? अपने आप को नष्ट करती रहे ? इसीलिए लेखक ने वृंदा के चरित्र को कुछ इस तरह से गढ़ने की कोशिश की है कि अब सहना और सहकर मर जाना । बार-बार बलत्कृत होकर जीना ,स्त्री की नियति नहीं है बल्कि स्वतंत्र जीवन की आकांक्षा और स्वतंत्रता के लिए प्रयास, अब स्त्री के लिए पहला कदम होना चाहिए ।

'मृत्यु और हंसी' उपन्यास पढ़ते हुए औद्योगिकरण और शहरीकरण जिसे हम पोस्टकॉलोनियल समाज कहते हैं । जिसमें शहरों में एक नए तरह का समाज विकसित हो रहा है । दिल्ली, मुंबई जैसे शहर, जिन शहरों का चित्र इस उपन्यास में आया है । इसी तरह से बेंगलुरु अहमदाबाद जैसे शहर जो लगातार अपने आप को बदल रहे हैं । न्यूयॉर्क और लंदन जैसे शहर जो अपने आप को लगातार बदल रहे हैं । ऐसे में एक नया समाज विकसित हो रहा है । इस नए समाज और कॉलोनियल कल्चर में स्त्री को अब किस तरह से अपना जीवन जीने का प्रयास करना चाहिए 'मृत्यु और हंसी' उपन्यास इस पर व्यापकता से विचार करता है ।

जब समाज बदल रहा है, संस्कृति बदल रही है, इस बदलाव में स्त्री को भी व्यापक रूप से उस धरातल की ओर जाना चाहिए जिसमें न्याय और समानता है, सम्मान और प्यार है । और वह रास्ता क्या हो सकता ? वह रास्ता सामाजिक दासता से ऊपर उठकर नए औद्योगिकरण को स्वीकार करना हो सकता है । और इस नए औद्योगिकरण में स्त्री भी उद्योग करना सीखें, आर्थिक रूप से सफलता ही उसकी स्वतंत्रता की पहली सीढ़ी है । यह हम इस उपन्यास में देख सकते हैं । जब वृंदा अपना व्यापार खुद संभालना चाहती है । इसीलिए यह उपन्यास बदलते हुए भारत और बदलती हुई स्त्री की छवि को हमारे सामने प्रस्तुत करता है । और यह बताने का सफल प्रयास करता है कि जिस तरह से भारत और विश्व बदल रहा है । उसी तरह से स्त्री भी बदल रही है । अब उसके साथ छद्म नैतिकता के आधार पर और छल नहीं किया जा सकता । अब उसे और गुलाम नहीं रखा जा सकता ।

"उत्तर आधुनिकतावाद मूलतः और तत्त्वतः चिंतन के पुराने केंद्रवाद को ध्वस्त कर बहुलताबाद (प्लुरिज्म) अथवा बहुसंस्कृतिवाद पर आधारित है। मूल धारणा यह कि एकीकृत के बजाय 'विभिन्नता' को मूल प्रश्न मानता है। पुरुष-शरीर तथा नारी-शरीर की मिन्नता पर न केवल बहस हुई है बल्कि नारियों ने कहा कि चूँकि पुरुष-शरीर से नारी-शरीर की भिन्नता है इसलिए यह भिन्नता भाषा, संस्कृति, जाति, लिंग-सभी क्षेत्रों में अलग की जानी चाहिए ताकि नारी-शरीर तथा नारी-चिंतन अपना स्वतंत्र-स्वायत्त स्थान पा सके। नारी शरीर के 'बायोलॉजिकल', 'साइकोलॉजिकल,' पोलिटिकल','कल्चरल' अलग 'मॉडल' बनने चाहिए ताकि पुराने 'स्टीरियो टाइप' बोगस ढाँचे के सामाजिक, आर्थिक साँचों को तोड़कर नारी-व्यक्तित्व मुक्ति के प्रयास में बिना पुरुप की मदद से अपना व्यक्तित्व और जीवन-दर्शन तय कर सके। नतीजा यह है कि पुराने ढाँचे के प्रति विरोधी-विचार, हाशिए पर स्थित लोग, परिधि पर स्थित अश्वेत जातियाँ, अश्वेत नारियाँ, समलैंगिक संबंध चेतना की जब तक पहचान और आवाज नहीं थी उन्हें सत्ता की भागेदारी तथा सांस्कृतिक-सामाजिक संवाद में शामिल किया जा सके। यहाँ नर-नारी की. 'विभिन्नता' पर बहुत जोर है क्योंकि दोनों अपनी मूल संरचनाओं 'संस्कृति-संवेदना, लिंग, परंपरा, भाषा, विश्वास, फैशन-फैड्स के कारण भिन्न हैं। नारीवादी चिंतन इस 'भिन्नता' को आधार बना कर ही पुरुष वर्चस्ववाद को चुनौती देता है। 'भिन्नता' से 'युगल-विपरीतता' का

सिद्धांत भी जुड़ा है। 'युगल-विपरीतता' का अर्थ है कि दो विपरीत एक-दूसरे से इस प्रकार जुड़े होते हैं कि उन्हें बिल्कुल अलग कर देना संभव नहीं। लेकिन इस जुड़ाव में एक का दूसरे पर वर्चस्व स्थापित हो जाता है। 'युगल-विपरीतता' का सिद्धांत अपने व्यवहार में स्त्री-पुरुष। इसमें स्त्री पर पुरुष का वर्चस्व है। अतः इस असमानतावादी वर्चस्व का अंत किया जाना चाहिए। नारीवादी आंदोलन इसी असमानतावाद के खिलाफ खुली लड़ाई लड़ रहा है। 4"अजय अवस्थी का यह उपन्यास निश्चय ही स्त्री विमर्श के उस केंद्र को पकड़ता है जिसमें वर्तमान उत्तर आधुनिकता के दौर में स्त्री को आर्थिक रूप से सबल होकर सामाजिक संघर्ष का रास्ता अपनाना होगा और इसी रास्ते से चलकर स्त्री अपने जीवन को व्यापक रूप से स्वतंत्र और न्याय पूर्ण बन सकेगी । और यह समय समाज तथा सामाजिक जरूरत भी है ।

****

संदर्भ :-

1.) 'मृत्यु और हंसी'(उपन्यास) लेखक – प्रदीप अवस्थी, प्रकाशक – राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 1– बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण – 2023, पृष्ठ संख्या– 68,
2.) वही, पृष्ठ संख्या –124,
3.) वही, पृष्ठ संख्या – 204
4.) 'उतराधुनिकतावाद की ओर', लेखक : कृष्ण दत्त पालीवाल, प्रकाशक : आर्य प्रकाशन मंडल IX/221, सरस्वती भंडार, गांधीनगर दिल्ली – 11003, संस्करण – 2013, पृष्ठ संख्या – 131

निराला के काव्य में सामाजिक दृष्टि

डॉ. रचना लारिया
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
प्रधानमंत्री कालेज ऑफ एक्सीलेंस
शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय छिंदवाड़ा

शोध सार :- बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी सूर्यकांत त्रिपाठी निराला से सम्पूर्ण साहित्य जगत परिचित हैं। वे कान्तिकारी कवि निराला और महाप्राण निराला आदि नामों से विख्यात हैं। ये अभिधान निराला की उस विद्रोह का संकेत करते हैं जो उनकी कला साधना और वास्तविक जीवन में आद्योपान्त विद्यमान रही है। आधुनिक युग की जितनी प्रवृत्तियाँ हैं उन सब का प्रतिनिधित्व जैसा उनके काव्य में हुआ उतना अन्यत्र कहीं नहीं है। इसलिए आचार्य नंददुलारे वाजपेई ने उन्हें शताब्दी का कवि कहा है । वे छायावाद के चार आधार स्तंभ सुमित्रानंदन पंत, जय शंकर प्रसाद महादेवी वर्मा,में से सूर्यकांत त्रिपाठी निराला सर्वाधिक प्रतिभा लब्ध एवं उच्च दरजे के साहित्यकार एवं साहित्य साधक हैं। एक महान कवि होने के साथ - साथ वे एक कुशल कथाकार भी हैं। सच्चे अर्थों में वे मानवीय संवेदनाओं के लेखक हैं।" निराला के काव्य संग्रह उपन्यास कहानियों आदि में उनकी मानवीय भावना निरंतर अनुप्रमाणित होती दिखती है ।"[1] मानवीय संवेदनाओं को जितनी गहराई और बेबाकी से निराला ने उद्गार रूप में प्रस्तुत किया है आज शायद दुर्लभ प्रतीत होता है । आधुनिकता के इस दौर में मानवीय संवेदनाएँ लगभग समाप्त होती जा रही है ऐसे में पुनः आवश्यक है कि निराला जैसे प्रतिभा लब्ध मानवीय सहानुभूति के व्यक्ति सत्य के आधार पर सामंती रूढ़ियों के प्रति विद्रोह करते हैं और साथ ही सामाजिक व्यंग्य के स्वर को भी उभारते हैं। इनकी व्यक्तिमूलक विद्रोहात्मक और द्वंद्वग्रस्त जीवन दृष्टि इनकी सौंदर्यपरक कविताओं करुणात्मक रचनाओं तथा रहस्यात्मक अनुभूतियाँ काव्य के मूल में हैं। जिस समाज में वो रहते थे उस समाज के वास्तविक जीवन का चित्रण अपनी विभिन्न कविताओं में उन्होंने बखूबी किया है। उनकी कविताओं में समाज का वास्तविक दर्पण झलकता है। समाज में हो रहे अत्याचार शोषक का शोषित के प्रति दृष्टिकोण एवं विसंगतियों से अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज के लोगों को अवगत कराया है।

"निराला की अपनी साहित्य चिंता बिल्कुल दूसरे स्तर और धरातल की वस्तु थी। रूप को भेदकर सत्य को देखने की आदि उनकी दृष्टि इस बदसूरती के बावजूद उसके भीतर जीवित जन की आत्मा का सौंदर्य परखने से नहीं चूक सकती थी।"[2]

'विधवा,'भिक्षुक'दीन'वह तोड़ती पत्थर'कुकुरमुत्ता'सरोज स्मृति'राम की शक्तिपूजा'रोंनी और कानी एवं डिप्टी साहब आए इन सभी रचनाओं में सामाजिक संदर्भों में उभरे नए यथार्थ की समस्याओं को नई दृष्टि से चित्रण किया गया है जिसमें गतानुगत सामाजिक मान्यताओं के परिवर्तन की प्रक्रिया स्पष्ट हो उठती है।

निराला ने भारतीय समाज और संस्कृति के पतन का सूक्ष्म अध्ययन करने के पश्चात वर्ण व्यवस्था की विकृति को इसका मूल कारण माना तुलसीदास काव्य में विविध वर्णों के पतित जीवन का जो चित्रण किया गया है वह कवि तुलसी के समय में जैसा था वैसा ही निराला के युग में भी था । बस अंतर केवल मुगल और अंग्रेजी शासन का है शेष सब वही शोषण वही दमन वही अत्याचार सब समान है । निराला जी ने क्षत्रियों और द्विजों के पतन पूर्ण जीवन को एक मार्मिक व्यंग्य के रूप में व्यक्त किया है

" विधि की इच्छा सर्वत्र अटल
यह देश प्रथम ही था हत बल